Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
Volume-13, Issue-4, March-2020
www.researchguru.net

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास: स्त्री आकांक्षा, मुक्ति एवं विद्रोह का स्वर

डॉ. सुनिल तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर शहीद भगत सिंह कॉलेज(दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ. सुशीला लड्ढा
मेवाड़ विश्वविद्यालय

रजनी पांडेय
हिंदी विभाग, शोधार्थी मेवाड़ विश्वविद्यालय

सारांश:

नारी की दशा एवं दिशा में परिवर्तन कोई अचानक उत्पन्न अवधारणा नहीं बल्कि एक लंबे संघर्ष का परिणाम है। 20वीं शताब्दी में स्त्री की परंपरागत अवधारणा टूटने लगी और नारी मुक्ति आंदोलन जोर पकड़ने लगा। स्वतंत्रता से पहले नारियों ने स्वयं को पारिवारिक संबंध और सुखद भविष्य तक ही सीमित कर रखा था। किंतु स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय नारियां स्वयं की पहचान व बेहतर कैरियर चाहती है। इन विचारों का प्रभाव मोहन राकेश, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, मैत्रेयी पुष्पा, मंजूल भगत, मृदुला गर्ग, निर्मल वर्मा और सुरेंद्र वर्मा के नारी पात्रों में विद्यमान है। स्वातंत्र्योत्तर भारत की स्त्रियां राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन की मुख्यधारा में शामिल होना चाहती हैं। मैत्रेयी जी के उपन्यास ***इदन्नमम*** *की नायिका मंदा गांव के कल्याण के लिए ग्रामीण जनता का नेतृत्व करती है। गांवों में घूमकर जागृति पैदा करती है। उपन्यास की एक अन्य स्त्री पात्र कुसुमा भाभी का पितृसत्तात्मक समाज से विद्रोह व पीड़ा भी देखने को मिलती है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास 'चाक' में स्त्रियों की दयनीय स्थिति का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। स्त्री चाहे ग्रामीण हो या शहरी-उनकी स्थिति में विशेष परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ता। इस उपन्यास में नारी शिक्षित है, अंधविश्वासों से जकड़ी हुई नहीं है, सामाजिक शोषण चक्र से स्वयं की ही नहीं बल्कि सामूहिक मुक्ति को चाहती है। इस प्रकार, स्वतंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में स्त्री की आकांक्षा स्त्री के निजी उड़ान से है मगर परिवार या समाज को बिखेरकर नहीं, पितृसत्ता के दकियानुसी विचारों को ललकार कर जो उनपर परंपरा के नाम पर बेड़ियॉ डालने की कोशिश कर रहा है।*

बीजशब्द: *महिला उपन्यासकार, पितृसत्ता, सामूहिक मुक्ति*

परिचय: भारतीय समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया विद्यमान है। नारी की दशा एवं दिशा में परिवर्तन कोई अचानक उत्पन्न अवधारणा नहीं बल्कि एक लंबे संघर्ष का परिणाम है। आजादी से पूर्व सती प्रथा, बाल-विवाह जैसी कुरीतियॉ समाज में व्याप्त थी। राजा राममोहन राय ने नारियों की सामाजिक स्थितियों में सुधार किया। 20वीं शताब्दी में स्त्री की परंपरागत अवधारणा टूटने लगी और नारी मुक्ति आंदोलन जोर पकड़ने लगा।

नारी स्वतंत्रता में पूर्णत: परिवर्तन तब आता है जब वे आर्थिक दृष्टि से मजबूत होने लगती हैं। भिन्न भिन्न रूपों में नारियों का विकास होने लगता है। विश्वप्रसिद्ध नारीवादी **सीमोन द बउआ** की उक्ति इस बात का समर्थन करती है 'हमें यह नहीं समझ लेने चाहिए कि केवल आर्थिक स्थिति के बदलते ही स्त्री में पूर्ण परिवर्तन हो जाएगा। यद्धपि मानव विकास के क्रम में आर्थिक व्यवस्था एक आधारभूत तत्व है, जो व्यक्ति का निंता है किंतु इसके बावजूद नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि अवस्थाओं में भी परिवर्तन की पूरी जरूरत है, जिसको बदले बिना नई स्त्री का आर्विभाव संभव नहीं होगा। [1]

[1] सीमोन द बुआ- स्त्री उपेक्षिता, 'द सेकेंड सेक्स' का प्रभा खेतान द्वारा अनुवाद, पृष्ठ संख्या 343

स्त्री के विकास की प्रक्रिया सरल नहीं रही है बल्कि इन्हें अपने विकास के लिए निरंतर संघर्ष करना पड़ा है। जब स्त्री अपने विकास के लिए अग्रसर होती है, समाज उसे कई बंधनों में बांधने का प्रयास करने लगता है और स्त्री को आगे अग्रसर होने के लिए इन सभी बंधनों को तोड़ना व संघर्ष करना पड़ता है। स्वतंत्रता सबके लिए आवश्यक है, इससे न सिर्फ स्त्री का बल्कि संपूर्ण जाति का विकास होता है। यह संपूर्ण मनुष्य जाति के लिए आवश्यक है। **रूसो** के अनुसार- मनुष्य का जन्म स्वाधीन है, लेकिन सर्वत्र बंधनों में जीता है।[2]

स्त्री पुरूष के कार्यों की अगर तुलना की जाती है तो स्त्री के कार्यों को उतना महत्व नहीं दिया जाता जितना कि पुरूषों के कार्यों को। इस विषय में **सीमोन द बउआ** ने भी कहा है कि - स्त्री चाहे विवाहित हो या अपनी गृहस्थी और परिवार में रहती हो, एक पुरूष की तुलना में परिवार उसके कार्य को अपेक्षित महत्व नहीं देता।' [3]

स्वतंत्रता से पहले नारियों ने स्वयं को पारिवारिक संबंध और सुखद भविष्य तक ही सीमित कर रखा था। किंतु स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय नारियां स्वयं की पहचान व बेहतर कैरियर चाहती है। इन विचारों का प्रभाव मोहन राकेश, कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, मैत्रेयी पुष्पा, मंजूल भगत, मृदुला गर्ग, निर्मल वर्मा और सुरेंद्र वर्मा के नारी पात्रों में विद्यमान है।

स्वातंत्रयोत्तर भारत की स्त्रियां राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन की मुख्यधारा में शामिल होना चाहती हैं। मैत्रेयी जी के उपन्यास **इदन्मम** की नायिका मंदा गांव के कल्याण के लिए ग्रामीण जनता का नेतृत्व करती है। गांवों में घूमकर जागृति पैदा करती है- ' ये नेता लोग हमें जीवित आदमी नहीं केवल वोट समझते हैं। हम सोचने समझने का माद्दा रखनेवाले इंसान नहीं, इनकी निगाह में कागज पर ठुकी मोहर हैं।'[4]

उपन्यास की एक अन्य स्त्री पात्र कुसुमा भाभी का पितृसत्तात्मक समाज से विद्रोह व पीड़ा भी देखने को मिलती है- ' अगिन साच्छी करके ही आए थे तुम्हारे पूत के संग। सात भांवरे फिर के। लिहाज रखा उसने? निभाया संबंध? दूसरी बिठा दी हमारी छाती पर। अंधेर पीते रहे तुम लोग। खाक है बूढ़ेपन पर। उस दिन से कोई संबंध कोई नाता नहीं रहा हमारा। जो ब्याहकर लाया था उससे ही कोई ताल्लुक नहीं तो इस घर में हमारा कौन ससुर और कौन जेठ?[5]

स्त्री जब वैवाहिक बंधन में बंधती है तो वह पत्नी के रिश्ते के साथ-साथ कई रिश्तों को जीती है। परिवार के हर सदस्य के साथ उसका एक आत्मीय संबंध बनता है जो समय के साथ-साथ गहरा होता जाता है, परंतु इन सारे रिश्तों की कड़ी या यू कहें धूरी उसके पति के साथ की होती है और जब यही साथ या संबंध खंडित हाता है तो परिवार के अन्य रिश्ते भी उसके लिए बिखर जाते हैं। यहॉ कुसुमा भाभी इसी पीड़ा से गुजर रही है और परिवार में कोई उसकी इस पीड़ा को समझ नहीं पाता। यहॉ मैत्रेयी जी इन्हीं तमाम स्त्री

[2] द सोसियल कॉन्टेक्ट एंड डिस्करेजेज-रूसो, पृष्ठ संख्या, 165

[3] सीमोन द बुआ- स्त्री उपेक्षिता, 'द सेकेंड सेक्स' का प्रभा खेतान द्वारा अनुवाद, पृष्ठ संख्या 327

[4] इदन्मम-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या 355

[5] इदन्मम- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या 146

पीड़ाओं अपने अलग-अलग पात्रों के माध्यम से दिखाने का प्रयत्न करती हैं। कुसुमा भाभी इस पुरूष सत्तात्मक समाज और ऐसे पारिवारिक रिश्तों को 'इदन्मम' कहती है, जहॉ स्त्री के वजूद को नकारकर सिर्फ उसे नाम के बंधन से जोड़ा गया है।

चाक की नायिका सांरग तो इससे भी आगे निकल जाती है और चुनाव में स्वयं प्रधान पद की उम्मीदवार बनती है। पुरूष व स्त्री की समानता के लिए निरंतर संघर्ष करती है व स्त्री पुरूष संबंधों का परंपरागत ढॉचा क्षतिग्रस्त हो जाता है- 'रामराज्य लेकर हम क्या करेंगे? सीता की कथा सुनी तो है। धरती में ही समा जाना है तो यह जद्दोजहद? अपने चलते कोई अन्याय न हो। जान की कीमत देकर इतनी सी बात, छोटा-सा संकल्प करके निभाने की इच्छा है बस।[6]

सारंग एक ऐसी स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है जो समाज के तमाम रूढियों से टकराती है वह एक प्रगतिशील नारी की भूमिका में है। वह इस बात को बखूबी समझती है कि जब तक स्त्री सशक्त नहीं होगी, अपने प्रति होनेवाले अत्याचार के विरूद्ध आवाज नहीं उठायेगी, तब तक उसे समाज से उपेक्षा ही मिलेगी। अपना हक पाने के लिए उसे आंतरिक रूप से सबल होना पड़ेगा और समाज की इस गैर बराबरी की खाई को पाटने के लिए उसे मुख्यधारा में अपनी जगह बनानी होगी। इस पुरूष वर्चस्ववादी सत्ता में स्त्रियों के हक में फैसला लेने के लिए मजबूती से दृढ़ संकल्प के साथ स्त्री को ही आगे आना होगा।

'मुझे चॉद चाहिए' में वर्षा वशिष्ठ के पिता को अपनी लड़की का नाटक में भाग लेना सामाजिक आचरण और नैतिकता का उल्लंघन लगता है जबकि वर्षा के लिए अभिनय जीवन का अनिवार्य हिस्सा है। पिता-पुत्री का संवाद यह स्पष्ट करता है- 'सिलबिल यह मैं क्या सुन रहा हूँ..... तू नौटंकी में काम कर रही है क्या? कान खोलकर सुन ले, हर बात की हद होती है। आखिर हमारे घर की भी कोई इज्जत है। ..... यह नौटंकी नहीं क्लासिकल ड्रामा है और इसमें ऐसे घरों की लड़कियॉ काम कर रही है, जिनकी इज्जत हमारे घर से भी ज्यादा ही है, कम नहीं।'

पिता पल भर सकपकाये फिर आक्रामक हो गए ' मुझे अपने घर से मतलब है। तेरे साथ लड़के भी काम कर रहे हैं। एक के साथ नाचती और गाना गाती है, कल के दिन कुछ ऊँच-नीच हो गया तो हमें मुँह छिपाने को जगह नहीं मिलेगी।..... लड़की की लाज मिट्टी का सकोरा होती है।'[7]

वर्षा वशिष्ठ और सारंग की इच्छाएं अलग-अलग है। सारंग का उद्देश्य उसका भविष्य न होकर उसका गांव व समाज है। वह समाज जहां स्त्रियों को प्रताड़ित किया जाता है। वर्षा की इच्छा व्यक्तिगत है और सारंग की सामाजिक है। नायिका का संपूर्ण व्यक्तित्व समाज के साथ जुड़ा हुआ है और उस समाज के बदलने के साथ-साथ नायिका का व्यक्तित्व भी परिवर्तित होता है। सारंग अपने समाज अपने गांव में पीड़ित हुई स्त्रियों के विषय में सोचती है- ' इस गांव के इतिहास में दर्ज दास्तानें बोलती है- रस्सी के फंदे पर झूलती रूकमणी, कुंए में कूदनेवाली रामदेई,

[6] चाक- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या 417

[7] मुझे चांद चाहिए- सुरेंद्र वर्मा, पृष्ठ संख्या- 321

करबन नदी में समाधिस्थ नारायणी..... ये बेबस औरतें, सीता मइया की तरह 'भूमि प्रवेश' कर अपने शील सतीत्व की खातिर कुर्बान हो गई। ये ही नहीं और न जाने कितनी।[8]

अतरपुर गांव में एक आकस्मिक घटना घटती है कि सारंग की फुफेरी बहन रेशम, जो पति की मृत्यु के पश्चात् अपनी इच्छा से गर्भधारण करती है, उसकी हत्या कर दी जाती है। इस घटना से दुखित सारंग सोचने लगती है कि अतरपुर गॉव के इतिहास में आज कुछ नया नहीं हुआ है कि किसी स्त्री के विद्रोह को कुचल दिया गया है या उसकी हत्या की गई है बल्कि यह तो युगों-युगों से उसके ऊपर किया जाने वाला अनाचार है। कभी अपने सतीत्व की खातिर, कभी इज्जत आबरू की रक्षा में तो कभी समाजाके सवालिया नजरों से बचने के लिए एक स्त्री को ही पीड़ित होना पड़ा है। रामराज्य जैसे आदर्श समाज में भी सीता जैसी देवी स्वरूपा स्त्री को अपनी पवित्रता सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है और प्रजा द्वारा लगाए गए लांछन के कारण उन्हें अपना घर परिवार, राज-पाठ छोड़कर वनवास जाना पड़ता है। अंतत: अपने अस्तित्व की रक्षा में सीता मइया को भू समाधि लेनी पड़ती है। उन्हीं की तरह इस युग में भी नारायणी, रामदेई, रूकमणि और न जाने कितनी ऐसी ही बेबस औरतों की दास्तानों से अतरपुर गांव का इतिहास दर्ज है जहां वे सदियों से पीड़ित होती चली आ रही हैं और आवाज उठाने या विद्रोह करने पर या तो उनकी हत्या कर दी गई है या स्वयं उन्होंने अपने अस्तित्व की खातिर बलिदान दे दिया है।

चाक समय का प्रतीक है। ये पूरे ब्रज प्रदेश के चारो ओर घूमता है। चाक की सीमा है औरतों को आर्थिक रूप से संपन्न करने की तरफ ध्यान न देना। सारंग कई गुणों में पारंगत है किंतु आर्थिक रूप से वह दूसरों पर निर्भर है। सारंग सामाजिक बदलाव की सूत्रधार तो है किंतु आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर न होने के कारण कहीं न कहीं उसका प्रयास पूर्ण नहीं हो पाता है। सारंग स्त्री के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए कई तरह के संघर्ष करती है। अपने पुत्र को दोबारा आगरा भेजे जाने के फैसले का विरोध करती है और जब रंजीत उसके विरोध को दबाने का प्रयास करता है तो सारंग विद्रोह कर देती है और रंजीत के खिलाफ बंदूक तक चला देती है। मैत्रेयी जी इसके बाद नारी को कोई वैज्ञानिक मार्ग नहीं दिखा पाई है कि विद्रोह के बाद नारी कौन सी दिशा तय करे? सारंग के संघर्ष को पूरी तरह से गति प्रदान की गई है पर विकास की समन्वित रूपरेखा नहीं।

स्त्री के मातृत्व पर जब आंच आती है तो स्त्री किसी भी बाधा, तूफान से लड़ने को तैयार हो जाती है, चाहे वह उस तूफान को झेलने की ताकत रखती हो या नहीं। मैत्रेयी जी अपने पात्र सारंग के माध्यम से यही दिखाने का प्रयास करती है-' असल मर्द है तो छू चंदन को, छू रणचंडी बनी खड़ी है सारंग।[9]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास 'चाक' में स्त्रियों की दयनीय स्थिति का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। स्त्री चाहे ग्रामीण हो या शहरी-उनकी स्थिति में विशेष परिवर्तन

[8] चाक- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या-7

[9] चाक- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या 412

दिखाई नहीं पड़ता। मैत्रेयी जी ने स्पष्ट किया है कि 'जानवरों के बाद अगर किसी को खूंटे से बांधा जाता है तो वे आंगन लीपती, घर सहेजती औरते हैं।..... यहॉ तो स्त्री का जन्म होते ही खेरापातिन दादी चंदना की कथा याद कराने लगती हैं कि बेटी जन्मी है तो इसे खबरदार भी करती रहना इसकी जननी कि इसको कितने और कहां तक पांव बढाने हैं। छोटी कौम से लेकर बड़ी जाति तक की औरतों की एक सी दशा। एक से बंधन। एक से कसाव। परिवार नहीं संतान का मोह इनको जीने की हिम्मत देता रहता है। कचहरी-कानून इनके लिए भी है, लेकिन वहां तक इनका जाना? चली भी जाए तो हर ओर से हमलावर घेरने लगते हैं।[10] चाक का परिवेश ग्रामीण है। महेश कटारे के अनुसार- उपन्यास की अंतर्वस्तु या घटनाएँ निम्न पर मध्यवर्गीय किसान के जीवन में हस्तक्षेप करके नए और संस्कारों के रूप में नये-पुराने के द्वंद्व से सामाजिक संरचनात्मक परिवर्तनों का लेखा-जोखा है।[11]

अपने रीति -रिवाजों, जाति संघर्षों, गीत-उत्सवों, प्यार-ईर्ष्याओ और कर्मकांडी अंधविश्वासों के बीच धड़कता हुआ अतरपुर गांव सारंग और रंजीत के आपसी संबंधों के उतार-चढ़ाव में समय को आत्मसात् कर रहा है।

'कभी-कभी इतने कठोर हो जाते हैं रंजीत कि उन्हें पहचानना मुश्किल पड़ता है। उनकी नीयत का खुलासा ऐसी घड़ियों में होगा, कहॉ पता था? इतने दिनों किस क्रम में रही फिर प्राणों से प्यारा पति दुश्मन हो उठेगा, यह समय का खोट है कि मेरा।'[12]

समाज में विवाह एक ऐसी सामाजिक संस्था है जो आपसी तालमेल, विश्वास, भरोसे, प्रेम, आदर-सम्मान व समझौते पर टिका होता है। जब कहीं किसी एक मूल्य का असंतुलन दिखाई देता है तो स्त्री पुरूष संबंध में टकराहट शुरू होने लगती है। यहां रचनाकार सारंग के माध्यम से स्त्री-पुरूष संबंध को समझाने का प्रयास करती है कि संबंध समाज की दी हुई नियति है और संतुलन व समन्वय ही इस उतार चढ़ाव के तराजू को ठीक कर सकता है।

मैत्रेयी पुष्पा के अनुसार-' चाक न राजनैतिक उपन्यास है, न समाजशास्त्रीय, मगर उस समाज की रोचक या भयावह कथा है जो इन दोनों से अछूती नही है। यह नारी विद्रोह नहीं है, न संघर्ष ही है बल्कि नारी की विकास यात्रा है।[13]

नारी का स्वाभाविक विकासमान रूप वर्णित है। सारंग सामाजिक कुसंस्कार का रेशा-रेशा अलग करके आगे बढ़ती है, रंजीत को ठेस पहुॅचाने के लिए नहीं करती, केवल स्थितियॉ टकरा रही है, संस्कार को सारंग झटके से नहीं तोड़ती है।

चाक में नारी की आर्थिक स्वतंत्रता पर प्रश्न उठाया जा सकता है। मैत्रेयी जी ने इसका समाधान भी किया है। वे कहती हैं कि किसान पति -पत्नी दोनों खेत में काम करते हैं जो उपज होता है वह सम्मिलित रहता है तो वहां नारी की आर्थिक स्वतंत्रता पर प्रश्न नहीं उठता। ग्रामीण नारी के माध्यम से नारी चेतना को उठाया गया है। यह नारी शिक्षित है, अंधविश्वासों से जकड़ी हुई नहीं है, सामाजिक शोषण चक्र से स्वयं की ही नहीं बल्कि सामूहिक मुक्ति को चाहती है।

[10] चाक- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या 345,

[11] साक्षात्कार, महेश कटारे, फरवरी.1998

[12] चाक, मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ संख्या- 190

[13] चाक, फ्लैप से उद्धृत

निष्कर्ष:

स्वतंत्रयोत्तर हिंदी उपन्यासों में नारी चेतना के बहुआयामी पक्ष को उभारा गया है और उनकी क्षमता और ऊर्जा को सही दिशा देने की कोशिश की गई है। कई अनछुए पहलुओं पर नये दृष्टि से सोचा गया है। यहॉ स्त्री की आकांक्षा स्त्री के निजी उड़ान से है मगर परिवार या समाज को बिखेरकर नहीं, पितृसत्ता के दकियानुसी विचारों को ललकार कर जो उनपर परंपरा के नाम पर बेड़ियॉ डालने की कोशिश कर रहा है। उनकी मुक्ति की आंकाक्षा भी परिवार के दायरे में है। वह उस दायरे को तभी तोड़ती हैं जब उनके अहं को ठेस लगती है। तभी उनके भीतर उमड़नेवाला विद्रोह भाव नये सामाजिक मूल्यों का निर्माण करता है।

<u>संदर्भ ग्रंथ सूची:</u>

1. सीमोन द बुआ- स्त्री उपेक्षिता, 'द सेकेंड सेक्स' का प्रभा खेतान द्वारा अनुवाद।
2. रूसो रू द सोसियल कॉन्टेक्ट एंड डिस्करेजेज।
3. इदन्मम- मैत्रेयी पुष्पा, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली।
4. चाक- मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
5. सुरेंद्र वर्मा : मुझे चांद चाहिए।
6. साक्षात्कार, महेश कटारे, फरवरी.1998